IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

'देहान्तर' नाटक का रंगमंचीय शिल्प

डॉ. जिनिथ निर्मला बेक
पोर्टब्लेयर
अ. नि. द्वीप समूह, भारत

प्रस्तावना:

नाटक अपनी प्रकृति में एक ऐसी विधा है जिसकी अभिव्यक्ति की प्रक्रिया लेखक द्वारा लिखे जाने पर समाप्त नहीं होती, उसका प्रस्फुटन और सम्प्रेषण रंगमंच पर जाकर ही होता है। रंगमंच के बिना नाटक की कल्पना नहीं की जा सकती। इसलिए रंगमंचीय परिप्रेक्ष्य से नाटक को पृथक करके उसके मर्म को नहीं समझा जा सकता। नाट्यार्थ की अभिव्यक्ति के लिए केवल संवादात्मक भाषा ही माध्यम नहीं होती, अपितु अभिनेताओं के अभिनय कौशल दृश्यबन्धों, रंगदीपन, ध्वनि-प्रकाश संयोजन आदि के समन्वित प्रयोग से भी नाट्यार्थ को विवृत्त किया जाता है। नेमिचन्द्र जैन ने नाट्य कला को परिभाषित किया है एवं उसके विविध तत्वों और सौन्दर्यों की समन्वित मीमांसा की है- "नाट्य कला सर्जनात्मक अभिव्यक्ति का वह रूप है जिसमें मुख्यतः किसी संवादात्मक आलेख या कथा का (जिसे हम नाटक कहते हैं) अभिनेताओं द्वारा अन्य रंगशिल्पियों की सहायता से किसी रंगमंच पर दर्शक समूह के सामने प्रदर्शित किया जाता है।"[1]

नन्दकिशोर आचार्य राजस्थान के उन महत्वपूर्ण नाटककारों में से है, जिन्होंने हिन्दी नाट्य जगत में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई है। वे आधुनिक हिन्दी रंगमंच के उस स्थान पर खड़े हैं जहाँ हिन्दी क्षेत्र के रंगकर्मी उन्हें आदर और सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। उनके नाटकों को फैजल अल्काजी, रामगोपाल, बजाज, वीरेन्द्र मेहदीरत्ता जैसे निर्देशकों ने मंचित किए हैं। 'देहांतर' नाटक की प्रथम प्रस्तुति प्रसिद्ध नाट्य मण्डली अभिनेत द्वारा 28 फरवरी, 1986 को चण्डीगढ़ में हुई। इसके अतिरिक्त यह नाटक दिल्ली, ग्वालियर जैसे केन्द्र पर भी मंचित हो चुका है। इस नाटक को सन 1992 में आकाशवाणी द्वारा प्रसारित नाटकों में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ।

'देहान्तर' नन्दकिशोर आचार्य का प्रसिद्ध और चर्चित नाटक है। रंगमंच की दृष्टि से इनके सभी नाटक सफल रहे हैं। "रंगमंच का अपना व्याकरण होता है। निर्देशक या प्रस्तोता, दर्शक, अभिनेता, नाट्य-मण्डल दृश्यबन्ध और रंगसज्जा के निर्माता रंगशिल्पी, रंगदीपनकार या प्रकाश-योजना करने वाले व्यक्ति, ध्वनि -संकेत अथवा ध्वनि प्रभाव के अवयव आदि रंगमंच के व्याकरण के अंग हैं। इनके इकाईबद्ध संहिता और प्रभावोत्पादक प्रयत्न से प्रस्तुतीकरण की कला का सौन्दर्य व्यक्त होता है। इस व्याकरण को समझे बिना नाटककार रंगमंच के माध्यम का समग्रता के साथ उपयोग नहीं कर सकता है।"[2] 'देहान्तर' नाटक पौराणिक आख्यान पर आधारित है। महाभारत में ययाति, देवयानी, शर्मिष्ठा एवं पुरू का प्रसंग आता है। कथानक के रूप में राजा ययाति के मिथक को लिया गया है। जिसका संदर्भ विषय भोग की अतृप्त इच्छा है। उस कथा का आश्रय लेकर देहान्तर' के माध्यम से नाटककार ने वर्तमान मानव मूल्य और समकालीन जीवन के संत्रास को अभिव्यक्त किया है। 'देहान्तर' नाटक का प्रकाशन 1987 ई. में हुआ। नाटक में कुल तीन अंक हैं। प्रथम अंक में नाटक के कथानक का मन्तव्य एक नाटकीय स्थिति तथा शर्मिष्ठा और मंगला द्वारा नाटकीय संवाद में केन्द्रित होता है। द्वितीय अंक में शर्मिष्ठा की त्रासदी तथा दूसरा मोड बिन्दुमती के इन्द्रलोक से परिचारिका रूप में आने और प्रथम दृष्टि में ही ययाति द्वारा आकर्षित अनुभव करने के साथ आता है। तीसरे अंक में बिन्दुमती ययाति की परिस्थिति को समझौता देकर लौट जाती है।

किसी भी नाटक के प्रदर्शन के लिए कई शैलियां है- यर्थाथवादी, स्वाभाविक, शैलीबद्धता, अभिव्यंजनात्मक, लोकनाट्य आदि। आधुनिक युग में इन पद्धतियों में से सर्वाधिक प्रचलन एवं सफलता यथार्थवादी शैली को मिली है। अभिनय में सहजता, रंगो में स्वाभाविकता और ध्वनि संकेतों में यथार्थता के चित्र यथार्थवादी शैली में अंकित होते हैं। युग सत्य से कटकर कोई भी नाटक वास्तविक नहीं बन सकता।

"नाटक आत्म से बाहर के जगत में संघात द्वारा आत्मउदघाटन और आत्मप्रतीति का साधन है। सामाजिक संबंधों का रूप, उसका तनाव और उनका दबाव उसके लिए वास्तविक होना चाहिए, अन्यथा वह अपनी अनुभूति कभी नाट्यात्मक रूप ही न ले सकेगी।"[3] इसलिए नाटक की प्रदर्शनात्मक रूढ़ियां और सौन्दर्यबोध को देशकाल और समाज की सांस्कृतिक चेतना प्रभावित करती है। प्रदर्शन शैली प्रायः मनोरंजन की

दृष्टि तो रखती है, किन्तु नाटक साहित्य भी है। अतएव मनोरंजन के साथ-साथ उसमें सार्थक अनुभूति, वास्तविक अनुभूति का अन्तर्भाव है। इसी बात में नाटक की मूल्यवत्ता अन्तनिहित है। नेमिचन्द्र जैन कहते है कि "रंगमंच से अलग करके नाटक का मूल्यांकन या उसके विविध अंगों और पक्षों पर विचार अपूर्ण ही नहीं, भ्रामक हो जाता है। संसार के नाटक साहित्य के इतिहास में कहीं भी नाटक को रंगमंच से अलग करके, केवल साहित्यिक रचना के रूप में नहीं देखा जाता।"[4] श्री आचार्य के नाटक में मुख्यतः यर्थाथवादी शैली का प्रयोग हुआ है।

प्रदर्शन शैली :

नन्दकिशोर आचार्य के नाटकों की प्रदर्शन शैली प्रमाणित है। लक्ष्मीनारायण लाल ने रंगमंच और नाटक के सम्बन्ध में लिखा है कि "रंगमंच की आत्मा नाटक अथवा नाटकीयता है और उसका सनातन धर्म प्रर्दशन हैं।"[5] 'देहान्तर' नाटक यर्थाथवादी शैली से अनुप्रमाणित है। यह नाटक तीन अंकों में विभाजित है - मंचसज्जा, पात्रों के क्रियाकलाप उनके संवाद आदि को युगोचित बनाकर नाटककार ने यथार्थ चित्र खींचा है तथा सरल एवं व्यावहारिक रंगमंच का जीवंत उदाहरण प्रस्तुत किया है। पहले अंक में ही राजमहल का दृश्य राजसी ठाट-बाट किन्तु शर्मिष्ठा का निजी कक्ष अंधेरा सा दिखाई देता है, जो शर्मिष्ठा की तनावपूर्ण स्थिति को दर्शाता है। दृश्यबंध प्रकाश और ध्वनि आदि के सम्मिलित प्रभाव से दर्शक की चेतना अतीत के साथ जुड़ जाती है, लेकिन नाटक द्वन्द्व और उसकी मूल संवेदना उन्हें वर्तमान बोध से अलग होने नहीं देती। रंगसज्जा के रूप में एक शयन शैया तथा दीपक है। ये साधन पात्रों की मनःस्थिति के विभिन्न 'शेड' को दर्शाने में सहायक होते हैं तथा यथार्थ वातावरण की सृष्टि करते हैं। मूल कथा के रूप में शयन शैया भोग विलास का प्रतीक है। पात्रों के अभिनय संबंधी निर्देश भी यथार्थवादी शैली में चित्रित हुए है।

नाटककार ने बिन्दुमती को उपस्थित कर ययाति को यथार्थ से अवगत कराया है। अंततः ययाति यथार्थ का स्पर्श करते ही ग्लानि का अनुभव करता है। नाटक के यथार्थ दर्शन का दायरा सीमित है। उसमें परिवार दाम्पत्य जीवन एवं कामेषणा के आन्तरिक घात-प्रतिघात, द्वन्द्व, विघटन, घुटन आदि में मनोवैज्ञानिक यथार्थ का तेवर रूपायित हुआ है।

रंग संकेत:

नाटकों में प्रयुक्त रंग संकेत नाटक के मंचीयकरण में सहायक होने के साथ-साथ पात्रों की मनःस्थिति का भी दर्शकों को सही परिचय देते हैं। रंगशिल्प के बारे में नाटककार जो रंग संकेत देता है नाट्य निर्देशक उसका प्रयोग की दृष्टि से इस बात पर गंभीरतापूर्वक विचार करता है कि किस प्रकार के दृश्यबन्ध, दृश्यसज्जा तथा ध्वनि या वातावरणमूलक प्रभाव सृष्टि आदि के द्वारा नाटक की मूलभूत रंग-चेतना और अर्थवत्ता को विवृत्त कर सकता है। नाटक की राह से गुजरता हुआ वह इनके संबंध में टिप्पणियाँ लिखता है या डिजाइन बनाता है। इस प्रकार वह नाटक के दृश्यमूलक आयाम को रूप या आकार देता है। नाटककार के रंग संकेतों से जहाँ एक और अभिनेता को पात्रों की मनःस्थिति समझने में सहायता मिलती है, वहीं अपने अभिनय को उत्कृष्ट कोटि का बनाने में भी सहायता मिलती है। नेमिचन्द्र जैन का कहना है कि " अभिनेता ही नाटककार के साथ वह सर्वप्रमुख और केन्द्रीय सृजनशील घटक है जिसके कारण प्रदर्शन को एक प्रभावशाली और संशलिष्ट कला-विधा का दर्जा मिलता है।"[6] अभिनय के लिए रंग-संकेत आवश्यक है।

'देहान्तर' नाटक में नाटककार ने अभिनय संबंधी रंग-संकेत छोटे तथा बड़े दोनों प्रकार से दिए हैं। "अचानक जैसे संभलकर।"[7] "अचानक बिन्दु से आँखे मिलने पर चुप हो जाती है।"[8] "तीखी दृष्टि से ययाति शर्मिष्ठा की ओर देखता है। शर्मिष्ठा उस दृष्टि को सहन नहीं कर पाती। पार्श्व की ओर देखकर जैसे किसी को पुकारना चाहती है।"[9]

प्रत्येक अक के प्रारंभ में दृश्यबंध विषयक रंग संकेत तथा पात्रों की गतिविधि से मनःस्थिति को उभारने वाले संकेत भी पाये जाते हैं। प्रथम अंक में अचानक तेज हवा से दीपक बुझने का संकेत भी प्रतीकत्व महत्व है। इन रंग-संकेतों के उचित प्रयोग से पात्रों के प्रवेश-प्रस्थान, स्वर के उतार-चढ़ाव तथा भाव-प्रकाशन के समय चेहरे के आनुभाविक परिवर्तनों को समझने में सहायता मिलती है। रंग संकेतों की उपलब्धि नाटक की प्रस्तुति को जीवन्त बनाने में उपयोगी सिद्ध हुई है।

ध्वनि-प्रकाश योजना:

नाटककार जो मंच पर पात्रों के माध्यम से नहीं कहला पाता है। उसे पार्श्व में से ध्वनियाँ उत्पन्न कर अर्थवान बनाता है। वैज्ञानिक साधनों के अतिरिक्त कण्ठ, हाथ, पैर वाद्ययंत्रों द्वारा भी ध्वनि प्रभाव उत्पन्न करने की प्रवृत्ति पाई जाती है। जहाँ मंच पर वैज्ञानिक ध्वनि-संकेतों के साधन सुलभ नहीं होते, वहीं प्रतिमा सम्पन्न कलाकार अपने गले की लोच से विविध प्रकार की ध्वनियाँ पैदा कर देते हैं। हाथ-पैर के उपयोग से कई प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न की जा सकती है। ये ध्वनि संकेत अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं, जो कथ्य को अधिक सम्प्रेष्य बना देते हैं तथा दर्शकों को बाँधे रखने में सहायक होते हैं।

'देहान्तर' नाटक में नाटककार द्वारा दिए गए ध्वनि संकेत मात्र प्रथम अंक में मंगला की पदचाप की ध्वनि मिलती है। "मंगला का प्रवेश। उस की पदचाप सुनकर शर्मिष्ठा उठकर देखती है।"[10] इसके अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार की ध्वनि उत्पन्न नहीं की गई है।

प्रकाश व्यवस्था के लिए प्रथम अंक में दृश्य-बंध पर दीपक का उपयोग किया गया है जो दृश्य की संवेदना को प्रकट तथा सम्प्रेषित करने में सहायक सिद्ध हुआ है। पहले दृश्य में ही रंगमंच पर प्रकाश विकीर्ण करते हुए उनके भूमिका के महत्व और दशा को दर्शाया गया है तथा दृश्य परिवर्तन भी प्रकाश बुझाकर किया गया है।

रंग-शिल्प:

रंग-शिल्प के अंतर्गत दृश्यबंध तथा मंच पर दृश्य-सज्जा, रूप सज्जा, वेशभूषा इत्यादि समाहित होते हैं जो मूक होते हुए भी नाटक को वाणी प्रदान करते हैं। नाट्य प्रदर्शन में इन सभी उपादानों का एक विशिष्ट योग है तथा इनका प्रयोग काल सापेक्ष रहा है।

'देहान्तर' नाटक रंगशिल्प के आधार पर अधिकाधिक स्वाभाविक एवं सरल है। उसे अतिरंजित साज-सज्जा से पृथक रखा गया है। भानु भारती का कथन है कि "नंदकिशोर आचार्य के नाटक सतही और घूम-घड़ाक नाटकीयता से रहित, मितव्ययी और आंतरिक है। कुछ-कुछ चेखव के नाटको की तरह।"[11] दृश्य सज्जा नाटक की मूल संवेदना से पूर्णतः अनुस्यूत है, वह नाटक की मूल संवेदना एवं द्वन्द्व को मूर्त रूप देने में अत्यंत महत्वपूर्ण है। दृश्यबंध के नाम पर एक शयन शैया है जो एक ओर ययाति की भोग लिप्सा को व्यंजित करता है तो दूसरी ओर शर्मिष्ठा और पुरू की पीड़ा को व्यजित करने में सहायक सिद्ध हुआ है। अलग-अलग प्रसंग में अलग-अलग स्तर पर शयन शैया का प्रतीकात्मक महत्व है, जो नाटक के आरंभ से अंत तक बना रहता है। दीपक को भी दृश्य-सज्जा के रूप में रखा गया है, जिसका जलना या बुझना शुभ या अशुभ को प्रकट करता है। वेशभूषा के अंतर्गत मुकुट तथा लाठी है जो पुरू तथा ययाति के युवावस्था तथा वृद्धावस्था को दर्शाता है। इसके अतिरिक्त अन्य किसी उपकरण का प्रयोग नहीं किया गया है।

निष्कर्ष:

नन्दकिशोर आचार्य के रंग-प्रयोग में किसी जटिल या आडम्बरपूर्ण तकनीकी प्रयोग नहीं है। फिर भी रंगमंचीय प्रभाव की दृष्टि से 'देहांतर' नाटक प्रशंसित है। सरल रंग-संकेतों में अर्थवान दृश्य-बन्धों के चित्र उभरते हैं, पात्रों में अन्तर्दन्द्व एवं अन्तर्विरोध से उत्पन्न तनाव दिखलाई पड़ते हैं। कथानक आधुनिक जीवन-परिस्थितियों में अन्तर्निहित नाटकीय स्थितियों को स्फुट करता है, उनकी रंग-प्रयोग परक प्रभावात्मकता सृजन के स्तर पर प्रकट होती है, तकनीकी साधनों की मुखापेक्षी नहीं है, संवादों में अभिनय गुण सम्पन्न भाषा का प्रयोग मिलता है, अनास्था और संशय के रूप में प्रकट होकर युग-बोध चिन्तन को आन्दोलित करता है। ये सभी तत्व समवेत रूप से सृजन के स्तर पर नाटक को प्रभावशाली रूप प्रदान करते हैं।

संदर्भग्रंथ सूची

1. रंगदर्शन - नेमिचन्द्र जैन, पृ.13, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
2. हिन्दी नाट्य समालोचन डॉ मान्धाता ओझा, पृ. 19, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
3. रंगदर्शन - नेमिचन्द्र जैन, पृ. 34, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
4. रंगदर्शन - नेमिचन्द्र जैन, पृ. 21, संस्करण – 2014, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
5. रंगमंच और नाटक की भूमिका लक्ष्मीनारायण लाल, पृ. 14. संस्करण – 1965, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
6. रंगदर्शन - नेमिचन्द्र जैन, पृ. 68, संस्करण 2014, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
7. देहांतर - नंदकिशोर आचार्य, पृ. 19, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर
8. देहान्तर - नन्दकिशोर आचार्य, पृ. 25, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर
9. देहान्तर - नन्दकिशोर आचार्य, पृ. 35, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर
10. देहांतर - नन्दकिशोर आचार्य, पृ. 10, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर
11. मधुमती, जुलाई- अगस्त 2000, पृ. 163, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर